आचार्य भरत द्वारा 'नाट्य शास्त्र' में वर्णित वीणा वादन विधि

गुरदयाल सिंह
शोध छात्रा, संगीत विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ

Abstract

In music Maharshi Bharat wrote Natyashastra. This book contains the detailed information about the muaic and other arts of that period. Various types of musical instruments are described in this great book. Veena is one of the most popular music instrumetns of that period. Variuos methods of playinf styles are mentioned in the Natyahsarta.

Key words : Natyashastra, Bharta, Veena, Maharshi Bharat, Veena playing techniques.

आचार्य भरत ने नाट्य शास्त्र में वीणा वादन प्रविधि का सविस्तार उल्लेख किया है। प्राचीन काल की वीणा वादन विधि में भरत द्वारा वर्णित वादन विधि सर्वाधिक प्रामाणिक एवं वैज्ञानिक हैं भरत काल में वीणा पर सरिकाएं नहीं थी, इसी कारण सरिकाहीन वीणाओं के परिपेक्ष्य में ही वादन विधि का वर्णन किया गया है। भारत ने समग्र वादन विधि को 'धातु' शब्द में नियोजित किया है। भाषा के मूलबीज को 'धातु कहा गया है। वैयाकरणो ने लगभग दो हजार धातु माने है। अभिनवगुप्त, नान्यदेव, महाराणा कुंभा और शाड्.र्गदेव ने भी भरत के इसी मत को पुष्ट किया है, जिसे विश्लेषित करते हुए डॉ. इन्द्राणी चक्रवर्ती लिखती है, 'धातु' वीणा वादन की प्रविधि है। जैसे आज हमारी सम्पूर्ण वादन क्रिया 'दा, रा, दिर, दा, रदा, –रदा', इस प्रकार के बालों पर आश्रित है,तद्धत् प्राचीन वैणिकों की वादन क्रिया धातुओं पर आश्रित थी। उन्हीं की सहायता से वीणा के के हस्त व्यापारों वाद्य बाज, करण, निर्गीत वाद्य आदि की रचना हुई थी[1] स्पष्ट है कि भरत द्वारा वर्णित 'धातु' ही परवर्ती वादन विधि के निये रूपों का आधार बने।

प्राचीन वादन–क्रिया में अक्षरों के भी तीन काल माने गये हैं– लघु, गुरू, प्लुत। लघु की उच्चारण अवधि एक मा़त्रा–काल, गुरू अक्षर की अवधि दो मात्रा काल तथा पलुत की अवधि तीन मात्रा काल मानी गयी है। भरत ने 'धातु' चार प्रकार के माने है

1 विस्तार धातु 2 करण धातु 3. आबिद्ध धातु 4 व्यंजन धातु। [2]

1. विस्तार धातु–भरत के अनुसार विस्तार धातु चार प्रकार का है। जिसे आघात प्रक्रिया की भिन्नता के आधार पर चार विभागों में विभाजित किया है।

1. विसतारज–इस धातु में एक आघात से एक स्वर को बजाने का विधान है।

2. संघातज– इस में दो आघात का नियम है।

1 इन्द्राणी चक्रवती, संगीत मंजूषा, पृ. 137

2 भरत, दि नाट्य शास्त्र, अनुवादक मनमोहन घोष, वोल्यूम–।। अध्याय–29, श्लोक–83

3. समवाजय–इस धातु में तीन आघात का प्रावधान है।

4. अनुबन्ध–विस्तारज, संघातज एवं समवायज में से किन्हीं दो या तीन प्रकारों के मिश्रण से अनुबन्ध धातु का निर्माण होता हैं

इस प्रकार, विस्तार धातु में तीन बोलों तक की रचना नियोजित होती है। इसके सभी अक्षर दीर्घ है, कहने का अभिप्रायः है कि इसमें प्रत्येक बोल की दो मात्रायें होती हैं। इसमें 'संघातज विस्तार धातु' के चार प्रकार निम्नलिखित अनुसार है।

1. द्विरूत्तर 2. द्विरधर 3. अधरादि उत्तरावसान 4. उत्तरादि अधरावसान

विस्तार धातु के विस्तारज और संघातज की वादन क्रिया को विश्लेषित करते हुए डॉ. लालमणि मिश्र लिखते है, ''विस्तारज, जिसमें एक आघात होता है, तीनो स्पतकों में प्रयुक्त होता है, परन्तु दो अक्षरो के संघातज धातु को मन्द्र तथा तार सप्तकों में एक–एक स्वर देकर चार प्रकार से प्रयुक्त किया जाता है। मन्द्र सप्तक के स्वरों को भरत ने 'उत्तर स्वर' अथवा केवल 'उत्तर' की संज्ञा दी है। इसी प्रकार तार सप्तक के स्वरों को 'अधर स्वर' अथवा केवल 'अधर कहा है। 'समवायज विस्तार धातु' के भी आठ प्रकार माने गये है

1 द्विरूत्तर 2 द्विरधर 3 द्विरत्तर अधरान्त 4 द्विरूधर उतरान्तक 5 द्विरूत्तर द्विरधर 6 द्विरधर द्विरूत्तर 7 मध्योत्तर द्विरधर 8 अधर मध्यद्विरूत्तर

इस प्रकार अनुबन्ध प्रकारों को छोड़कर विस्तार धातु के मुख्य 14 प्रकार सम्भव है। अनुबन्ध प्रकार चूंकि विस्तार धातु के प्रकारों के मिश्रण से बनता है अतएव उसके अनेक प्रकार सम्भव है।[1]

2. करण धातु : जहां विस्तार धातु के बोल दो मात्राओं के होते है, वहां करण धातु के बोल लघु, गुरू अर्थात् ह्रस्व, दीर्घ व मिश्रित होते है। लघु अक्षरों के ह्रस्व बोल दिड़ और गुरू अक्षर के दीर्घ बोल दा, डा होते है। भरत ने नाट्य शास्त्र में करण धातु के पाचं प्रकारों का वर्णन किया है।

1 रिभित 2 उदिच 3 निरदित 4 ह्रद 5 अनुबंध।

नाट्य शास्त्र में 'करण धातु' का स्पष्टीकरण लधु–गुरू के रूप में ही मिलता है। यथा–

''त्रिक पंच सप्तनवकैर्यथाक्रम संयुतो भवेद्वाद्ये।

सर्वे रनुबंधकृतैर्गुवतः स्यात् करण धातुः।''[2]

अर्थात् करण धातु में तीन, पांच, सात, नौ ऐसे अक्षर यथाक्रम होगे तथा प्रत्येक का अंत गुरू से करना होगा। अनुबंध सबका मिश्रण हैं करण धातु के पाचं प्रकारों का मात्राओं सहित स्पष्टीकरण निम्नलिखित हैः

1. रिभित : इसमें 2 लघु और 1 गुरु सहित चार मात्राएं होती हैं।

1 लालमणि मिश्र, भारतीय संगीत वाद्य, पृ. 66
2 नाट्य शास्त्र, अध्याय–29, श्लोक –92

2. उदिच : इसमें 4 लघु और 1 गुरु सहित छह मात्राएं होती हैं।

3 निरदित : इसमें 6 लघु और 1 गुरु सहित आठ मात्राएं होती हैं।

4. ह्रद : इसमें 8 लघु और 1 गुरु सहित दस मात्राएं होती हैं।

5. अनुबन्ध : यह उपर्युक्त प्रकारों के मिश्रण से बनता है, अतएव इसके अनेक मात्रा भेद युक्त प्रकार बन सकते हैं।

हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति के परिपेक्ष्य में लघु–गुरु के बोलों का विवेचन इस प्रकार है। वर्तमान हिन्दुस्तानी संगीत के आधार पर लध्वक्षर के लिए हस्व बोल 'दि' या 'र' तथा गुर्वक्षर के लिए 'दा' या 'रा' को द्विमात्रिक माना है।

3. आबिद्ध धातु : आबिद्ध धातु का लक्षण भरत ने इस प्रकार कहा है–

''द्विस्त्रिश्चतुष्कनवकैः प्रहारैः क्रमशः कृतैः।

आबिद्धधातुविज्ञेयः सातुबंध विभूषित।।''[1]

अर्थात् क्रमशः दो, तीन, चार, नौ प्रहार करने पर आविद्ध धातु माना जाता है, जो अनुबंध से भूषित है। भरत ने इस धातु में केवल लघु आघात को स्वीकार किया है, जबकि शारंगदेव लघु–गुरु दोनों आघातों को मानते हैं। भरत ने आबिद्ध धातु के पांच प्रकारों का उल्लेख किया हैः

1. क्षेप : यह धातु दो लघु युक्त है।

2. प्लुत : यह धातु तीन लघु युक्त है।

3. अतिपात : यह धातु चार लघु युक्त है।

4. अतिकीर्ण : यह धातु नौ लघु युक्त है।

5. अनुबंध : यह उपर्युक्त प्रकारों के मिश्रण से बनता है, अतएव इसके अनेक मात्रा भेद प्रकार बन सकते हैं।

4. व्यंजन धातु–व्यंजन धातु में लघु–गुरु या मंद्र–तार के स्थान पर प्रहार संख्या का नियम है। दोनों हाथों की इस अंगुलियों के विविध प्रयोग, जो वीणा की वादन किया में सौंदर्य उत्पन्न करें, व्यंजन धातु है। इनका प्रयोग विपंची आदि पर होता था। शारंगदेव ने व्यंजन धातु का वर्णन करते हुए साथ में 'हस्तव्यापार' भी कहे हैं। भरत ने व्यंजन धातु के दस भेद माने हैं, जो इस प्रकार हैः–

1. पुष्प–अंगूठा एवं कनिष्ठा का आघात।

2. कल–दो अंगूठों से दो तार एक समान छेड़ना।

1 नाट्य शास्त्र, अध्याय–29, श्लोक 94

3. तल–दक्षिण हस्त के अंगुष्ठ से तंत्री पर हनन करें, तथा वाम अंगुष्ठ से तंत्री का निपीड़न (दबाव) हो, तभी 'तल' है।

4. निषकोटित–दाहिने हाथ के अंगूठे से आघात ही 'निष्कोटित' है।

5. उद्दृष्ट–बायें हाथ की तर्जनी से प्रहार।

6. रेफ–सब उंगलियों से एक साथ छेड़ना।

7. अनुस्तवित–ताल से तारों की छेड़।

8. बिन्दु–गुरु अक्षरों की छेड़।

9. अवमृष्ट–दक्षिण हस्त की कनिष्ठा व दोनों हस्तों की अंगुष्ठाओं द्वारा त्रिस्थान के एक ही स्वर को तीन तंत्रियों पर पृथक्–पृथक् आघात करने पर 'अवमृष्ट' है।

10. अनुबंध–अन्य अनुबन्धों की तरह व्यंजन धातु का अनुबंध भी सभी प्रकारों के मिश्रण से बनता है।

भरत द्वारा 'नाट्य शास्त्र' में वर्णित 'धातु' प्राचीन वीणा वादन विधि का आधार थे, किन्तु वर्तमान काल में प्रचलित तंत्रवाद्यों की वादन विधि पर भी इसके प्रभाव को परिलक्षित किया जा सकता है। उदाहरण स्वरूप आधुनिक सितार वादन में दाहिने हाथ से दा दिर दा रा आदि बोलों का वादन किया जाता है। इसी को भरत ने 'धातु' रूप बताया है। इसी प्रकार, बायें हाथ से जिस प्रकार आज कल सितार पर मींड, मुर्की आदि बजाई जाती है, उसी प्रकार की वस्तु को उन्होंने बायें हाथ के 'धातुव्यापार' माने हैं। स्पष्ट है कि भरत द्वारा वर्णित धातु व्यापारों का प्रभाव आधुनिक तंत्रवाद्यों पर भी परिलक्षित किया जा सकता है।

वृत्ति

धातु–वर्णन के उपरान्त भरत ने 'वृति' का वर्णन किया है। ये वृतियां धातु से संयुक्त होती हैं। इनका संबंध गायन और वादन दोनों से है। भरत ने तीन वृत्तियां मानी है :

1. चित्रावृत्ति 2. वृत्ति अथवा वार्तिकवृत्ति 3. दक्षिणावृत्ति

प्राचीन वीणा वादन विधि में द्रुतलय की शैली को चित्रावृत्ति मध्यलय की शैली को वार्तिकवृत्ति तथा विलम्बित लय की शैली को दक्षिणावृत्ति कहा गया है। ताल की परिभाषा में इन्हें 'मार्ग' कहा जाता है।

जाति

आचार्य भरत ने वीणा वादन विधि में धातु एवं वृत्ति के साथ 'जाति' का भी उल्लेख है। 'नाट्य शास्त्र' में चार प्रकार की जातियां कहीं गयी हैं।

1. उदात्ता 2. ललिता 3. रिभिता 4. घन

इन चार जातियों में से 'उदात्ता' का संबंध 'विस्तार' एंव अन्य धातुओं से है। 'ललिता' का संबंध केवल 'व्यजन धातु' से है। 'रिभिता' का संबध 'आबिद्ध धातु' से माना गया है। 'धन का संबंध 'करण धातु' से माना गया है।

इसके अतिरिक्त प्राचीन वीणा वादन विधि में अंग–प्रत्यंग वीणाओं के लिये' करण 'का उल्लेख भी प्राप्त होता है। कहने का अभिप्राय है कि मुख्य वीणा 'मत्तकोकिला' आदि का वादन क्रिया का अंग वीणा (चित्रा, विपंची आदि कैसे अनुसरण करती है, इस विशेष क्रिया को ही 'करण' कहा जाता है। यह वादन क्रिया नाट्य के पूर्व रंग में प्रयुक्त होती थी। 'करण' की वादन क्रिया भी धातुओं पर ही आधारित थी, चूंकि भरतकाल में वादन विधि में 'धातु व्यापार' ही प्रमुख थे। इसीलिये 'करण' आदि के भेदों –प्रभेदों की चर्चा अनावश्यक प्रतीत होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

नाट्य शास्त्र, श्री भरतमुनि, सम्पा. प. केदार नाथ, दिल्लीः भारतीय विद्या प्रकाशन, 1998
नाट्य शास्त्र सम्पा एम राम कृष्ण कवि, प्रथम संस्करण, बड़ौदाःओरियण्टल इन्स्टीच्यूट, 1964
तन्त्री नाद, डा. लालमणि मिश्र, भाग एक, कानपुरः साहित्य
नाट्य शास्त्र 28 वां अध्याय,आचार्य कैलाशचन्द्रदेव बृहस्पति, नई दिल्लीः बृहस्पति पब्लिकेशन्स, 1986
भारतीय संगीत वाद्य, डा. लालमणि मिश्र, नई दिल्लीः भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1973
संगीत मंजुषा, इन्द्राणी चक्रवर्ती, दिल्लीः मित्तल पब्लिकेशन्स, 1988